हिंदुओं ! उठो, जागो !

महाराष्ट्र के पालघर में जूना अखाड़े के दो साधुओं समेत तीन लोगों की बेलगाम पागल 'कुत्तों' के हाथों हुई हत्या के बाद हिंदुस्तान के बहुसंख्यक हिंदुओं की आँखों में आँसू हैं, मुँह पर गालियाँ हैं और दिलों में गर्म बद्दुआएं उबल रही हैं । कोरोना काल में चूँकि सब घरों में कैद हैं ऐसे में सिवाय इसके हम कुछ कर भी नहीं सकते। इसलिए हथेलियाँ मसल रहे हैं और मौक़ा मिलते ही प्रतिशोध लेने की सौगंध खाकर दाँत पीसते हुए रह-रहकर तिलमिला रहे हैं। बातूनी शौर्य के फ़्लेवर वाली 'हिंदुत्व की च्युंगम' बोरियत भरे इन दिनों में अचानक सबका प्रिय आहार बन गई है।

आप सबको क्या कहूँ ! मैं भी हिंदू हूँ। मैंने भी पालघर का दिल दहलाने वाला वीडियो देखा है। मेरी भी आँखें हैं जो सत्तर बरस के भगवाम्बरधारी साधु को लहूलुहान होकर गिरते देख डबडबा गई है। मेरे भी कान हैं जिनने लाठियों-सरियों की तड़तड़ाहट के बीच एक बेक़सूर बूढ़े बाबा और उनके साथी युवा साधु की चीखें सुनी है। मेरा भी दिल है जो यह सब देखकर तार-तार हुआ है और मैं भी तकरीबन उतनी ही भन्नाटी में हूँ जितनी में आप सब हैं।

मगर माफ़ कीजिएगा हम सबकी यह भन्नाटी उतनी ही थोथी और पोंची है जितनी कि मेले ठेलों में बिकने वाली बच्चों की खिलौनों वाली तलवार होती है। न लोहा, न धार। न हथियार, न मार। कहो तो तलवार, अन्यथा खिलौना बेकार !

बुरा मत मानिए। सच है इसलिए कड़वा है। इसी कारण इन तबलीगियों से लेकर शाहीनबाग़ियों तक की नज़र में, इन वामपंथियों से लेकर उदारवादियों की निगाह में हिंदुस्तान का असल मालिक होकर भी देश का सौ करोड़ हिंदू या तो काफ़िर हैं या दो कौड़ी का 'होली का भड़वा' है।

अपने दिल पर हाथ धरकर पूछिए कि इन टटपूँजों की नज़र में हमारी यह औक़ात क्यों है ? क्यों वे हमारे भोले भगवा भगत को लाठियों, पत्थरों, जूतों से पीट-पीटकर ख़ून से लाल कर रहे हैं ? क्यों हम पालघर जैसे दसियों हादसों के दोहराए जाने के बावज़ूद बेबस कभी सरकारों को कोस कर अपनी भड़ास निकालने को मजबूर हैं तो कभी पुलिस को आड़े हाथों लेकर तमाशबीन बने हुए हैं ? क्यों ये मुल्क के मुट्ठी भर दुश्मन, ये इंसानियत के हत्यारे हमारे ही टुकड़ों पर पलकर हमारे ही माथे पर मूत रहे हैं ? क्यों हमारे पास हर बार ख़ून का घूँट पीकर सिवा मुँह को बददुआओं का बवासीर बनाने के अलावा दूसरा चारा नहीं रह जाता ?

इसलिए कि हम बंटे हुए हैं। जैसे गुच्छे वाला अंगूर सौ रुपए सेर मिलता है और अलग-अलग बिखरा

हुआ बीस रुपए ढेर, बस वैसे ही हम भी हैं। हम बहुसंख्यक हैं मगर इतने बिखरे हुए हैं कि हमारी ताक़त मानो तिनका बनकर रह गई है!

एक तरफ़ हम ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र हैं तो दूसरी तरफ़ कोटि-कोटि देवताओं के उपासक होकर एक-दूसरे के ही प्रतिद्वंद्वी हैं। विष्णु के आराधक शिव के पूजकों को प्रतिद्वंद्वी मानते हैं तो शिव के भक्त विष्णु के भक्तों को मूर्ख समझते हैं। वरना दक्षिण में शिवकांची, विष्णुकांची क्यों बनते? तुलसीदासजी को क्यों लिखना पड़ता कि हरिहर निंदा सुनहिं जो काना, होई पाप गो घात समाना! इसलिए कि परस्पर निंदा पाँच सौ बरस पहले भी थी और आज भी है। आज भी स्मार्त की जन्माष्टमी अलग मनती है और वैष्णवों की अलग! बंगाल और गुजरात देवी पूजता है, महाराष्ट्र गणेश। उड़ीसा सूर्य तो उत्तरभारत विष्णु और शिव। विष्णु के ही दो अवतारों राम और कृष्ण के झगड़े क्या कम है?

आपने वह किंवदंती सुनी होगी न कि बनारस में कुछ कृष्णभक्त तुलसीदास को पकड़कर कृष्ण के एक मंदिर में ले गए और बोले कि बहुत राम-राम रटते हो, लो अब 'इनके' सामने सिर झुकाओ! और तुलसी बाबा को कहना पड़ा था कि 'कहाँ कहो छबि आपकी, भली बनी हो नाथ। पर तुलसी मस्तक तब नवे, धनुष बाण लो हाथ!' यह प्रमाण है कि हमारे यहाँ पँच-देवोपासना में ही पंगा नहीं है, राम और कृष्ण के आराधकों तक में भी बहुत पहले से तलवारें खिंची आईं हैं। रामभक्तों की दसियों शाखाएँ हैं और कृष्णभक्तों की भी। कहीं पुष्टिमार्गीय हैं तो कहीं इस्कॉन वाले। कहीं सखी सम्प्रदाय तो कहीं महाभारत के महानायक।

न एक सर्वमान्य नायक है, न एक सर्वस्वीकार्य नीति। न एक ग्रन्थ, न ही एक रीति। धर्म की सौ संस्थाएँ हैं और सौ दुकानें। कुर्सी के लिए आपस में लड़ते शंकराचार्यों की अपनी ढपली अपने राग है तो अखाड़ों के अलग-अलग मठाधीश और अड्डे हैं। कथा-प्रवचनकारों की सैकड़ों निजी दुकानें चल रही हैं तो चार धामों से लेकर ज्योतिर्लिंगों तक पंडे-पुजारियों के पृथक-पृथक पाखण्ड जारी है। सब धर्म के 'पर्सनल ब्रांड' का जुलाब बाँटकर हिंदुओं का पाचन सुधारने के नाम पर एक-दूसरे की जेब पर डाका डालने तुले हुए हैं। कलयुग के कलह से डरा और मोक्ष के भाव भरा हिंदू रोज़ देश के असंख्य देवालयों में, धर्म प्रतिष्ठानों में करोड़ों का दान देकर भी लुटा-पिटा भटक रहा है। न दिए हुए दान का कोई हिसाब है, न धन का कोई एकल या केंद्रीय कोष। सिख, जैन सब हिंदू होकर भी अपनी-अपनी स्वतंत्र धाराओं में बह रहे हैं।

समय, परिस्थितियों, परम्पराओं, मान्यताओं और अहंकारों ने हमें एक होकर भी अनेक कर छोड़ा है। इतना कि अब सब 'हिंदुत्व की आन, बान, शान की ख़ातिर एक जाजम पर आ जाएं' इसकी संभावना तक 'कोरा ख्वाब' है!

ऐसे में यदि ज़माती जात के देशद्रोही मौलाना हमें धमकाते है कि 'हम अल्पसंख्यक होकर भी तुम क़ाफ़िर बहुसंख्यकों पर भारी पड़ेंगे' तब हमें मिर्ची नहीं लगना चाहिए। वे सच ही तो कहते हैं! इसलिए कि जो संगठित है, अवसर आने पर बाज़ी उसी के हाथ लगना है। यदि हम बहुसंख्यक होकर भी बंटे हुए हैं तो हमें आज नहीं तो कल यूँ ही बेमौत मरना है।

ग़ौर कीजिए और दूसरों की अच्छी बातें भी समझिए, सीखिए! इन धमकाने वालों के पास केवल एक

पवित्र क़िताब है, इसलिए वे सब एक हैं। सब सप्ताह में एक दिन उपासना के बहाने एक-दूसरे से अनिवार्य रूप से मिलते हैं। सबके दिए ज़कात का पूरा हिसाब है और मज़हब के नाम पर सारे धन के इस्तेमाल की सुनियोजित केंद्रीकृत व्यवस्था है। जो 'क़ाफ़िरों के ख़िलाफ़ जेहाद' में काम आ रही है। हिंदू समाज की तरह नहीं कि थोड़ा माल पंडे जीम गए तो थोड़ा दान कथाकार ले भागा। किसी ने आरती की थाली का चढ़ावा अंटी कर लिया तो किसी ने पांच सितारा आश्रम की दुकान खोल ली।

मानता हूँ कि नाना देवी-देवता और भिन्न-भिन्न पंथ-परम्पराएँ ही हिंदुत्व का सच्चा श्रृंगार है। मानता हूँ कि विश्व के तीस से अधिक प्रमुख और प्रचलित धर्मों में सबसे प्राचीन होने के कारण सनातन धर्म अपने मूल में एक होकर भी विविधता से परिपूर्ण है। मानता हूँ कि यहीं वैविध्य हिंदुत्व की विशेषता है। मगर आप भी कृपा कर स्वीकारिए कि अब यही 'सर्वस्वीकार्य सहिष्णुता' हमारी कमजोरी बन चली है। बनी है या नहीं मगर देशद्रोहियों और हमें काफ़िर समझने वालों की नज़र में यह कमजोरी मानी तो जा रही है। वरना न तो कोई हमारे संतों को यूँ मौत के घाट उतारने की हिम्मत करता, न ही कोई हमें धमकाने की ज़ुर्रत कर पाता!

इतना तो साफ़ है कि हिंदुओं के दुश्मन 'दूसरे' नहीं हैं बल्कि ये ही तथाकथित हिंदू हैं। वे सब जो हिंदू होकर भी हिंदू विरोधियों के हिमायती हैं और वे भी जो धर्म के नाम पर अपने ही लोगों की जेबें तराश कर अपनी-अपनी तिजोरियों को भरने में जुटे हैं। जब तक हिंदुत्व की आड़ में धर्म का गोरखधंधा जारी है, लाशें तो गिरेगी ही! तब आप छाती-माथे कूटते रहिए। कभी गोधरा था, फिर शाहीनबाग़ियों के दंगों का नङ्गा नाच और अब पालघर। 'मौलाना' उद्धव ठाकरे चाहे जो कहे, 'मार शोएब मार' की आवाज़ सबने सुनी है।

अब आचार्य महामंडलेश्वर श्रद्धासुमन अर्पित करें और अखाड़ा परिषद नागा साधुओं के शौर्य का गान कर फिर चिलम पीने बैठ जाए, होना क्या है। हमारे हाथ में क्षमा-सहिष्णुता के मिलावटी पंचामृत का बासी प्रसाद ही आना है और सूतक के दिनों में हम सभी को अपने-अपने आँगन में बैठ विधवा विलाप ही गुँजाना है।

हिंदुओं! उठो, जागो! भले अपनी-अपनी परम्पराओं के फूल-फूल में महको पर अब एक गुलदस्ते में बंध जाओ। मत भूलो, संगठन शक्ति से ही निर्णायक जय सम्भव है। समूह शक्ति ही इतिहास रचती है, बिखरी हुई क़ौम इतिहास बन जाया करती है। हमें इतिहास बनना नहीं है, इतिहास बनाना है। वरना आज दो साधुओं की लाशें अपनी आत्मा पर ढोई है, कल और लाशें अपने कांधों पर उठाना है।